ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 257-263

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं औद्योगिक वित्त

1. करुणानिधि गर्ग
2. डॉ0 पुष्पेन्द्र सिंह
E-mail: peetambrask@gmail.com

Received- 21.07.2021, Revised- 26.07.2021, Accepted - 01.08.2021

सारांश : ***'औद्योगीकरण की सफलता उद्यमिता, कुशल उत्पादन तकनीकों, कुशल प्रबंधन विधियों और सभी पर्याप्त वित्तीय संसाधनों से ऊपर जैसे कारकों पर निर्भर करती है। इसलिए, औद्योगिक नीतियों के कार्यान्वयन को सुविधाजनक बनाने और तीव्र औद्योगीकरण के योजना उद्देश्य के क्रियान्वयन के लिए, औद्योगिक वित्त के पर्याप्त निर्बाध प्रवाह और विश्वसनीय वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होती है। उचित शर्तों पर अपेक्षित अनुपात में इसकी उपलब्धता औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण कारक है। औद्योगिक वित्त अपने आप में एक जटिल प्रकृति धारण करता है, हालाँकि यह आकर्षक है। इसलिए, उद्योग, चाहे वह बड़ा हो, मध्यम हो या छोटा, निजी या सार्वजनिक क्षेत्र में, स्थिर पूंजी और कार्यशील पूंजी के साथ–साथ तीन अलग–अलग चरणों में, विविधीकरण के बिंदु पर और विकास के चरण में होने की आवश्यकता होती है। दूसरे शब्दों में, उद्योग के विस्तार, आधुनिकीकरण और विकास के लिए और दूसरी ओर उद्योग के आवर्ती खर्चों को पूरा करने के लिए पूंजी की आवश्यकता होती है। अचल पूंजी और कार्यशील पूंजी की आवश्यकता के रूप में वित्त का अनुपात उद्योग के प्रकार, उत्पादन की प्रक्रिया और प्राप्त किए जाने वाले उत्पादन के स्तर को देखता है। पूंजी–गहन प्रौद्योगिकी के साथ बड़े पैमाने पर उत्पादन वाले उद्योग में, कार्यशील पूंजी के लिए निश्चित पूंजी की आवश्यकता बहुत बड़े अनुपात की आवश्यकता होगी। एक मध्यम आकार के उद्योग में, अनुपात छोटा होगा, जबकि श्रम गहन प्रौद्योगिकी वाले छोटे पैमाने के उद्योग के मामले में, अनुपात अभी भी छोटा होगा।***

कुंजीभूत शब्द–औद्योगीकरण, उद्यमिता, कुशल उत्पादन, कार्यशील पूंजी।

औद्योगिक वित्त के स्रोत– उपरोक्त के अनुरूप, अध्ययन एक ओर वित्त के स्रोतों का पता लगाने का प्रयास करता है और दूसरी ओर, समय बीतने के साथ और व्यवसाय के बदलते वैश्विक परिदृश्य के साथ औद्योगिक वित्त की बदलती संरचना का विश्लेषण करने के लिए, यह ध्यान दिया जा सकता है। इस बिंदु पर कि अध्ययन अपने दायरे को उधार देने वाले संस्थागत वित्त तक सीमित रखता है, जिसे भारत के वित्तीय संस्थान स्वतंत्रता के बाद से सुविधा प्रदान करते रहते हैं। ये वित्तीय संस्थान भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर स्थापित किए गए थे, क्योंकि समय के साथ भारतीय उद्योग के विकास और विकास को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त वित्त प्रदान करने की आवश्यकता थी।

स्वतंत्रता से पहले औद्योगिक वित्त के स्रोत– अध्ययन के उद्देश्य को पूरा करने के लिए, 'स्वतंत्रता से पहले के समय में, वित्त के स्रोतों में परिवर्तन पर एक त्वरित नजर रखना सार्थक होगा। प्रथम विश्व युद्ध से बहुत पहले, कृषि, व्यापार, वाणिज्य और स्वदेशी उद्योगों जैसे कला और हस्तशिल्प जैसी आर्थिक गतिविधियों को उद्योग की आंतरिक बचत, उद्यमशीलता के स्वयं के संसाधनों और व्यापारियों के छोटे वर्ग द्वारा भी वित्तपोषित किया गया था।

साहूकार और स्वदेशी निजी बैंकर। वित्त के ये स्रोत सीमित थे और औद्योगिक विकास के लिए अपर्याप्त थे। उस समय, कोई इस बात से सहमत होगा कि वित्त की अपर्याप्त आपूर्ति के कारण औद्योगिक विकास लगभग उपेक्षित या उपेक्षित था (जोशी, 1965)। वित्त की यह कमी उस समय के भारतीय निवेशकों की प्रवृत्ति को दर्शाती है जो औद्योगिक प्रतिभूतियों में निवेश करने के लिए कहावत रूप से शर्मीले और अनिच्छुक थे (बसु, 1939)। इस प्रकार उन दिनों, जैसा कि लाल (1990) बताते हैं, संस्थागत प्रमोटरों के निवेश, निर्गम गृहों, हामीदारी एजेंसियों और वित्तीय मध्यस्थों की अनुपस्थिति में एक मात्र औद्योगिक विकास केवल विशिष्ट था। इसने औद्योगिक निवेश में बचत के मुक्त प्रवाह को बाधित किया जिससे औद्योगिक विकास में मदद मिलेगी। भारत में प्रबंध एजेंसी प्रणाली उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अस्तित्व में आई, जब सूती कपड़ा, जूट कपड़ा, कोयला खनन और लौह और इस्पात उद्योग आदि जैसे आधुनिक उद्योग अस्तित्व में थे। उस समय, उन्हें उद्यमशीलता की क्षमता की कमी, पूंजी की कमी और तकनीकी और प्रबंधकीय जानकारी की कमी जैसी कई समस्याओं का सामना करना पड़ा था। उस समय, उद्योगों के प्रबंधन और वित्तपोषण को व्यवस्थित करने के लिए प्रबंध एजेंसी प्रणाली का उदय हुआ। इसका मतलब यह है कि उन्होंने नई चिंताओं को शुरू करने, संयुक्त स्टॉक कंपनियों को बढ़ावा देने, अपने स्वयं के धन को नियोजित करने, या वित्त की व्यवस्था करने, गारंटर के रूप में कार्य करने और चिंताओं का प्रबंधन करने के लिए प्रारंभिक कार्य किया। उन्होंने न केवल प्रारंभिक अचल पूंजी के लिए बल्कि बाद के विस्तार, आधुनिकीकरण और पुनर्गठन के लिए भी वित्त प्रदान किया। इसी प्रकार डॉ. राज के. निगम (1957), प्रो. एस.के. बसु (1958), एन.सी.ए.ई.आर.

1. शोधार्थी, 2. एसोसिएट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, पी.सी. बागला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हाथरस (उ0प्र0) भारत
अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

(1959) और वित्तीय आयोग (1953) ने बताया कि औद्योगीकरण के शुरुआती दिनों में, जब न तो उद्यमिता और न ही पूंजी भरपूर थी, प्रबंध एजेंटों ने उद्यमिता और पूंजी दोनों प्रदान की। नतीजतन, भारत में सूती और जूट के वस्त्र, लोहा और इस्पात और बागान आदि जैसे अच्छी तरह से स्थापित उद्योग हो सकते थे। वे कई जाने–माने प्रबंध घरानों के अग्रणी उत्साह और बन्धन देखभाल के कारण गरिमा की अपनी वर्तमान स्थिति तक पहुँच सके। इसलिए, उन दिनों, यदि प्रबंध एजेंट अनुपस्थित थे, तो सदी के शुरुआती भाग में भारत का औद्योगिक विकास सिर्फ एक सपना होगा। हालाँकि, प्रबंध एजेंटों की प्रमुख प्रकृति और एकाधिकारवादी प्रवृत्ति को देखते हुए, भारत सरकार ने 1936 और 1951 में भारतीय कंपनी अधिनियम के संशोधनों के माध्यम से एजेंसी घरों को विनियमित करना बुद्धिमानी और अपरिहार्य समझा। अंततः 1970 में इस प्रणाली को और अधिक संशोधन करके समाप्त कर दिया गया। कंपनी अधिनियम 1956 (कुच्छल, 1966)। इस प्रणाली के उन्मूलन ने व्यक्तिगत वित्तपोषण प्रणाली को संस्थागत वित्तपोषण के साथ बदल दिया और यह स्वतंत्रता के बाद की अवधि में हुआ।

जनता से सावधि जमा अभी भी औद्योगिक वित्त का एक अन्य स्रोत था। वास्तव में इसी स्रोत के आधार पर बंबई और अहमदाबाद में सूती और जूट वस्त्र उद्योग स्थापित किए गए थे (लोकनाथन, 1935)। हालांकि, यह अल्पावधि जमा के साथ लंबी अवधि के निवेश को पूरा करने के लिए वित्त का एक अच्छा स्रोत साबित नहीं हुआ। सार्वजनिक जमाओं के अलावा, वित्त का एक अन्य रूप भी है जो उद्योग को सावधि वित्त प्रदान करता है। इसे सार्वजनिक प्रतिभूति बाजार के रूप में जाना जाता है। आजादी के शुरुआती दिनों में, यह अविकसित था, और बैक अप में संस्थानों से रहित था। इसका मतलब है कि शेयर या डिबेंचर जैसी नई प्रतिभूतियों को रखने की सुविधा के लिए कोई इश्यू हाउस या निवेश ट्रस्ट या यूनिट ट्रस्ट नहीं थे (गुप्ता, 1969)।

इस प्रकार, स्वतंत्रता से पहले, भारत औद्योगिक विकास के मोर्चे पर बहुत कुछ हासिल नहीं कर सका और यह भारत में सावधि ऋण देने वाली वित्तीय संस्थाओं की अनुपस्थिति के कारण था। इसलिए तीव्र औद्योगीकरण के साधन के रूप में कार्य करने के लिए वित्तीय संस्थानों की आवश्यकता महसूस की गई। इस बात को पहली बार 1916–18 के औद्योगिक आयोग और 1931 में भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति द्वारा दोहराया गया था। उन्होंने उद्योगों को सावधि ऋण वित्त प्रदान करने के लिए औद्योगिक बैंकों की स्थापना का सुझाव दिया था। आगे पी.5.लोकनाथन (1969) और एस.के. बसु ने औद्योगिक बैंकों की स्थापना की भी सिफारिश की। यद्यपि तथ्य यह है कि उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान और वर्तमान शताब्दी के मध्य तक, औद्योगिक विकास के लिए एक शक्ति के रूप में अलग औद्योगिक बैंकों की अवधारणा भारत में नहीं उभरी। बाहरी स्रोतों से दीर्घकालिक वित्त जुटाने के लिए पर्याप्त व्यवस्था के अभाव में, उद्योग का विकास मुख्य रूप से उद्यमशीलता के हाथों में जमा पूंजी पर या उद्यमिता के स्रोतों और वित्त के स्रोतों के बीच मौजूद घनिष्ठ संबंध पर निर्भर था। आजादी से पहले के समय का परि.श्य।

उपरोक्त अवलोकन हमें एल.सी. गुप्ता (1969) जिनके अध्ययन में कहा गया है कि स्वतंत्रता पूर्व अवधि के दौरान, औद्योगिक वित्त की संरचना में औद्योगिक उद्यमिता का बंद–चक्र चरित्र और एक अर्ध–संगठित और संकीर्ण औद्योगिक प्रतिभूति बाजार था। यह संस्थानों को जारी करने और उद्योग के दीर्घकालिक वित्तपोषण में मध्यस्थ वित्तीय संस्थानों द्वारा भागीदारी की आभासी अनुपस्थिति से रहित था। इसके परिणामस्वरूप, स्वतंत्रता के बाद की अवधि के दौरान छोटे और मध्यम आकार के उद्योगों को औद्योगिक विकास के लिए विशिष्ट वित्तीय अंतराल की समस्या का सामना करना पड़ रहा था।

स्वतंत्रता के बाद औद्योगिक वित्त के स्रोत– स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत सरकार ने अपनी नीति के अनुरूप और तीव्र औद्योगीकरण की प्राथमिकताओं और कार्यक्रमों के अनुसार औद्योगिक वित्त उपलब्ध कराने में सक्रिय भूमिका निभाई। तब से सरकार ने उद्योगों को दीर्घकालिक वित्त की आपूर्ति में अंतराल को पाटने के लिए वित्तीय संस्थानों का एक नेटवर्क बनाने की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

टर्म – राष्ट्रीय स्तर पर वित्तीय संस्थानों को उधार देना– उपरोक्त की अगली कड़ी के रूप में, भारत सरकार ने राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर वित्तीय संस्थानों की स्थापना की। वे सरकार द्वारा निर्धारित योजनाओं और नीतियों के अनुरूप तीव्र औद्योगीकरण को प्रभावित करने के लिए मध्यम और दीर्घकालिक वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। 1948 में एक मामूली शुरुआत से, आईएफसीआई की स्थापना के साथ, समय–समय पर वित्तीय सहायता की संरचना को मजबूत किया गया है। यह अधिक लचीली संरचनाओं वाले नए संस्थानों को जोड़कर और मौजूदा संस्थानों के संसाधनों और संचालन के दायरे को बढ़ाकर किया जाता है। औद्योगिक वित्त की वर्तमान संरचना में राष्ट्रीय स्तर पर निम्नलिखित वित्तीय संस्थान शामिल हैं:

1. इंडस्ट्रियल फाइनेंशियल कॉरपोरेशन ऑफ एंडिया (आईएफसीआई)– भारतीय औद्योगिक वित्त निगम वित्तीय संस्थान का अग्रणी है। इसकी स्थापना जुलाई, 1948 में हुई थी। यह स्वभाव से एक शेयरधारकों का निगम है। इसका उद्देश्य उद्योगों की वित्तीय आवश्यकता को पूरा करना है और मध्यम और लंबी अवधि के क्रेडिट को औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए आसानी से उपलब्ध कराना है,

ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

विशेष रूप से ऐसी परिस्थितियों में जैसे सामान्य बैंकिंग आवास अनुपयुक्त हैं, या पूंजी जारी करने वाले चौनलों का सहारा अव्यावहारिक है (आईएफसीआई, 1949) एल. सी. गुप्ता (1969) के अनुसार, आईएफसीआई के उद्देश्य में जिन परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है, उन्हें 'मैकमिलन गैप' के रूप में जाना जाने लगा है। इसका मतलब यह है कि आईएफसीआई एक गैप फिलर के रूप में अपनी भूमिका की परिकल्पना करता है।

आईएफसीआई को सौंपे गए गैप फिलर की भूमिका के अनुसार, यह सार्वजनिक क्षेत्र और सहकारी क्षेत्र के साथ–साथ अपनी स्थापना के बाद से, और 1972 के बाद से निजी क्षेत्र में बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों को एक अवधि की वित्तीय सहायता प्रदान करने वाला माना जाता है– 73. ये औद्योगिक क्षेत्र बिजली के निर्माण, खनन, शिपिंग, उत्पादन और वितरण में लगे हुए हैं।

अपनी स्थापना के बाद से, निगम को केवल रुपये के ऋण के रूप में वित्तीय सहायता का लेन–देन करने के लिए अधिकृत किया गया था। लेकिन अधिनियम में नए संशोधनों के साथ, इसने अब धीरे–धीरे अपने वित्तीय संचालन को आस्थगित भुगतान गारंटी, विदेशी मुद्रा, गारंटी, ऋण और रुपये और विदेशी मुद्रा के रूप में अग्रिमों को कवर करने के लिए बढ़ा दिया है। इसने इक्विटी और वरीयता शेयरों और डिबेंचर के साथ–साथ औद्योगिक इकाइयों के शेयरों और डिबेंचर में प्रत्यक्ष सदस्यता के रूप में सार्वजनिक मुद्दों की प्रचार गतिविधियों में प्रवेश किया। हालाँकि, इसकी हामीदारी गतिविधि अब तक केवल डिबेंचर तक ही सीमित है। ये वित्तीय प्रावधान आईएफसीआई द्वारा मुख्य रूप से नई औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना और साथ ही मौजूदा इकाइयों के विस्तार, नवीनीकरण, आधुनिकीकरण और विविधीकरण के लिए किए गए हैं।

अंत में, 1948 में इसकी स्थापना के बाद से, निगम द्वारा संचालित गतिविधियों का दायरा और विस्तार वर्षों से बढ़ता गया। जुलाई 1993 से, प्थ्ब्ठ को एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी में परिवर्तित कर दिया गया था और इसे अब भारतीय औद्योगिक वित्त निगम लिमिटेड के रूप में जाना जाता है। प्थ्ब्ठ के इस उदार रूप में, वित्तीय वर्ष 1995–96 के दौरान सहायक कंपनियों के रूप में तीन नई कंपनियों को शामिल किया गया, अर्थात–

1. आईएफसीआई फाइनेंशियल सर्विस लिमिटेड, जो मर्चेंट बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने वाली थी, आईएफसीआई कस्टोडियल सर्विसेज लिमिटेड, जिसे एक डिपॉजिटरी के रूप में कार्य करना था और

2. आईएफसीआई इन्वेस्टर्स सर्विसेज लिमिटेड, जो रजिस्ट्रार और ट्रांसफर एजेंट के रूप में कार्य करेगा। इसके अलावा, इसने एक वाणिज्यिक बैंक और एक एसेट मैनेजमेंट कंपनी और म्यूचुअल फंड भी स्थापित किया। यह सब तेजी से औद्योगिक विकास सुनिश्चित करने के लिए किया गया था। औद्योगिक वित्त निगम ने निस्संदेह वित्तीय संस्थानों के नेटवर्क को मजबूत किया। हालांकि, स्पष्ट रूप से वे लचीलेपन, पहल और ड्राइव से पीड़ित थे जो कि एक वित्तीय संस्थान के लिए प्राथमिक रूप से निजी क्षेत्र में उद्योगों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक थे। इससे दो नए संस्थानों, राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम (एनआईडीसी) और भारतीय औद्योगिक साख और निवेश निगम (आईसीआईसीआई) का निर्माण हुआ।

2. राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम (एनआईडीसी)– एनआईडीसी की स्थापना अक्टूबर 1954 में एक पूर्ण स्वामित्व वाली सरकारी कंपनी के रूप में हुई थी। यह विशुद्ध रूप से और यहां तक कि मुख्यतः एक वित्तीय एजेंसी नहीं थी। एसटीएस का उद्देश्य उद्योगों को बढ़ावा देना था और देश के औद्योगिक ढांचे में अंतर को भरना बेहद महत्वपूर्ण माना जाता था। 1963 से, एनआईडीसी निजी उद्योग के लिए एक वित्तीय संस्थान नहीं रहा।

3. भारतीय औद्योगिक ऋण और निवेश निगम (आईसीईसीआई)– विश्व बैंक ने भारत सरकार को सलाह दी कि भारत में एक विशेष संस्थान स्थापित करने की तत्काल आवश्यकता है। नई संस्था को भारतीय औद्योगिक ऋण और निवेश निगम कहा जाता था। यह अमेरिकी सरकार द्वारा प्रायोजित था। तदनुसार, आईसीआईसीआई की स्थापना 1955 में हुई थी। यह मूल रूप से निजी क्षेत्र में बड़े औद्योगिक उद्यमों को बढ़ावा देने और उनकी सहायता करने के लिए था। इसके अलावा, इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए, निगम औद्योगिक उद्यमों के निर्माण, विस्तार और आधुनिकीकरण में सहायता प्रदान करता है। यह औद्योगिक निवेश के स्वामित्व और निवेश बाजार के विस्तार में भी आंतरिक और बाहरी दोनों निजी पूंजी की भागीदारी को प्रोत्साहित और बढ़ावा देता है।

आईएफसीआई जैसे औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्यों का पीछा करने के लिए, आईसीआईसीआई कई तरीकों से अपनी प्रत्यक्ष सहायता प्रदान करता है: (ए) रुपये और विदेशी मुद्रा के संदर्भ में दीर्घकालिक ऋण और अग्रिम देना, (बी) के शेयरों और डिबेंचर को हामीदारी करना औद्योगिक इकाइयां, (सी) सीधे अपने शेयरों और डिबेंचर की सदस्यता लेना, (डी) आस्थगित भुगतान की गारंटी देना और (ई) विदेशी मुद्रा बाजार में बांड जारी करना आदि। हालांकि यह एक वित्तीय संस्थान है, जो नए लोगों को विदेशी मुद्रा ऋण प्रदान करने के लिए अधि.त है। साथ ही निजी क्षेत्र में मौजूदा उद्योग। वास्तव में, आईसीआईसीआई अन्य वित्तीय संस्थानों की तुलना में विदेशी मुद्रा ऋण का बड़ा हिस्सा उधार दे रहा है। इसके कामकाज की विशिष्ट विशेषता यह है कि, यह हामीदारी की सुविधा प्रदान करता है, जिसे आमतौर पर पहले से स्थापित वित्तीय संस्थानों (गुप्ता 1969) द्वारा टाला जाता है। इस प्रकार, यह अपनी शुरुआत

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

से ही एक जारीकर्ता–सह–उधार देने वाली संस्था बना हुआ है।

आईसीआईसीआई अपने मूल रूप में निजी क्षेत्र की वित्तीय जरूरतों को पूरा करने वाला था। फिर भी समय बीतने के साथ, इसने अपनी वित्तीय गतिविधियों में विविधता लाई है। इसने अपने संचालन के दायरे को निजी क्षेत्र से संयुक्त क्षेत्र, सार्वजनिक क्षेत्र और सहकारी क्षेत्र तक भी बढ़ाया या बढ़ाया है। 1969 के बाद से, आईसीआईसीआई ने स्वामित्व और साझेदारी की चिंताओं के लिए विदेशी मुद्रा ऋण प्रदान करना शुरू कर दिया, या तो सीधे या एसएफसी और बैंकों जैसे अन्य संस्थानों के सहयोग से। इसी तरह, इसने रसायनों, पेट्रोकेमिकल्स, भारी इंजीनियरिंग और धातु उत्पादों जैसे उद्योगों को विदेशी मुद्रा ऋण इस विचार के साथ लिया कि इससे उन्हें विदेशों से पूंजीगत उपकरण आयात करने में मदद मिलेगी। 1973 में, ICICI ने अन्य निजी निवेश स्रोतों से लिए गए ऋणों की गारंटी देना शुरू किया।

उपरोक्त प्रत्यक्ष सहायता के अलावा, आईसीआईसीआई ने 1976 में आईडीबीआई द्वारा शुरू की गई सॉट लोन योजना में भाग लिया है। इसके तहत ऋण चयनित उद्योगों को विशेष रूप से इंजीनियरिंग उद्योगों में उनके संयंत्र और मशीनरी के आधुनिकीकरण के लिए दिए जाते हैं।

अस्सी के दशक के उत्तरार्ध में, आईसीआईसीआई ने अपने वित्तीय संचालन के क्षेत्र को काफी व्यापक किया। इसने मर्चेंट बैंकिंग डिवीजन की स्थापना की, जो उद्योगों के लिए वित्त जुटाने का काम करता है। इसने विभिन्न कार्यों के रूप में वित्तीय सहायता की मंजूरी भी दी, जैसे कि आस्थगित ऋण, पट्टे पर सहायता, किस्त बिक्री सहायता, परिसंपत्ति ऋण और उद्यम पूंजी सहायता। आईसीआईसीआई इन कार्यों के मद्देनजर कम्प्यूटरीकरण, आधुनिकीकरण, ऊर्जा संरक्षण के उपकरणों के प्रतिस्थापन, अभिविन्यास, प्रदूषण नियंत्रण संतुलन और विस्तार आदि के लिए पट्टे पर सहायता प्रदान करता है।

4. राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (एनएसआईसी)– राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (छैप्ब्) की स्थापना लगभग 1955 की इसी अवधि में हुई थी। इसका उद्देश्य प्रचार, विपणन, वित्तपोषण और अन्य सहायता गतिविधियों में लघु उद्योग की सहायता करना था। वर्तमान में, लघु–स्तरीय इकाइयों को किराया–खरीद के आधार पर मशीनरी की आपूर्ति के क्षेत्र में इस पर जोर दिया जाता है। लेकिन एनएसआईसी के लिए प्रभावी ढंग से काम करना मुश्किल था, क्योंकि छोटे उद्योग क्षेत्रीय स्तरों पर बिखरे हुए थे। इसलिए, राज्य सरकारों ने 1960 से 1970 के दौरान लघु उद्योग विकास निगमों का समर्थन और स्थापना की। वे राष्ट्रीय स्तर पर एनएसआईसी की तर्ज पर मोटे तौर पर तैयार किए गए हैं, इसलिए, वर्तमान में, एनएसआईसी के संचालन को विकास तक पहुंचने के लिए सही दिशा में निर्देशित किया जाता है।

5. उद्योग लिमिटेड के लिए पुनर्वित्त निगम (आरसीआई)– भारत में वाणिज्यिक बैंक अब तक तरलता और सुरक्षा की पारंपरिक और रूढ़िवादी नीतियों का पालन कर रहे हैं। औद्योगिक वित्त के क्षेत्र में उनका प्रत्यक्ष योगदान बहुत सीमित रहा है। इसलिए, जून 1958 में, भारत सरकार ने उद्योग के लिए पुनर्वित्त निगम (त्ब्) की स्थापना का संकल्प लिया। यह उन बैंकों को पुनर्वित्त सुविधाओं का विस्तार करने वाला था जो उद्योग को मध्यम अवधि के ऋण प्रदान करते थे। इस प्रकार, बैंकों को पुनर्वित्त निगम (आरसीआई) द्वारा प्रदान की जाने वाली पुनर्वित्त सुविधाओं के आधार पर 'सावधि' ऋण प्रदान करने की अनुमति है। आरसीआई ने एक तरह से सीधे तौर पर औद्योगिक प्रतिष्ठानों को वित्त नहीं दिया। 1962 के बाद से, इसके दायरे और गतिविधियों का विस्तार करने की .ष्टि से पुनर्वित्त सुविधाएं प्रदान करने की शर्तों को बड़े पैमाने पर उदार बनाया गया था। हालाँकि, 1 सितंबर 1964 से, त्ब् के पूरे व्यवसाय को भारतीय औद्योगिक विकास बैंक ने अपने अधिकार में ले लिया।

6. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आईडीबीआई)– भारत का अपना राष्ट्रीय स्तर का सक्षम वित्तीय संस्थान था, जब उसने 1964 में आईडीबीआई नामक एक निकाय की स्थापना की। इससे पहले, भारत में हाल ही में, उभरते प्रतिस्पर्धी माहौल की चुनौतियों का सामना करने की आवश्यकता उत्पन्न हुई। इसके आलोक में आईडीबीआई ने वित्तीय सहायता प्रदान करने और भविष्य के औद्योगिक विकास के लिए विभिन्न प्रकार की प्रचार गतिविधियों को शुरू करने के अपने पैटर्न को बदल दिया है. इसने अपनी व्यावसायिक रणनीतियों में भी विविधता लाई है और उत्पादों और सेवाओं की श्रेणी का विस्तार किया है। परिसंपत्ति आधारित वित्तपोषण और उपकरण पट्टे के अलावा, आईडीबीआई कॉर्पोरेट क्षेत्र की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मर्चेंट बैंकिंग, डिबेंचर ट्रस्टीशिप और विदेशी मुद्रा सेवाएं जैसी सेवाएं भी प्रदान करता है। इन सेवाओं के तहत यह पूंजी बाजार के मुद्दों, ऋण सिंडिकेशन, परियोजना मूल्यांकन, पूंजी पुनर्गठन और विदेशी मुद्रा से संबंधित सेवाओं की मेजबानी आदि के लिए उद्योग को पेशेवर सलाह और सेवाएं प्रदान करता है। ऐसी सेवाओं के माध्यम से, यह कॉर्पोरेट क्षेत्र में उद्योग को बढ़ावा देना चाहता है।

इसके अलावा, सुधार के बाद की अवधि में, आईडीबीआई ने कुछ अन्य संस्थानों के सहयोग से कई संगठन स्थापित किए हैं। वे हैं: (ए) भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान (ईडीआईआई): यह उद्यमिता विकास को बढ़ावा देने वाला एक राष्ट्रीय संस्थान है। (बी) भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी): यह एक पूंजी बाजार नियामक के रूप में कार्य करता है जो व्यवस्थित बाजार विकास और निवेशक संरक्षण के लिए प्रतिबद्ध है। (सी) नेशनल स्टॉक एक्सचेंज ऑफ इंडिया लिमिटेड (एनएसईआईएल): यह

राष्ट्रव्यापी स्क्रीन–आधारित व्यापार प्रणाली प्रदान करता है। (डी) स्टॉक होल्डिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (एसएचसीआईएल): यह हिरासत सेवाएं प्रदान करता है। (ई) इन्वेस्टर सर्विसेज ऑफ इंडिया लिमिटेड (आईएसआईएल): यह विभिन्न निवेशक सहायता सेवाएं प्रदान करता है। (च) क्रेडिट एनालिसिस एंड रिसर्च लिमिटेड (केयर): यह उपकरणों की क्रेडिट रेटिंग में शामिल है। (छ) ऊर्जा बचत के लिए अभिनव वित्त पोषण योजना (इन्यूज): यह विभिन्न औद्योगिक इकाइयों के संरक्षण की देखभाल करती है। (ज) नेशनल सिक्योरिटीज डिपॉजिटरी लिमिटेड (एनएसडीएल): यह स्क्रिप्ट रहित ट्रेडिंग के युग की शुरुआत करना चाहता है। आदि, पूंजी बाजार के बुनियादी ढांचे के विकास और उद्यमिता विकास के लिए। आईडीबीआई ने 1990 में एक पूर्ण स्वामित्व वाली स्टॉक ब्रोकिंग सहायक कंपनी की भी स्थापना की, जैसे कि स्माल इंडस्ट्रीज डेवलपमेंट बैंक ऑफ इंडिया (ैप्कठप) यह छोटे पैमाने के क्षेत्र को सहायता प्रदान करने के लिए है। इसने कई अन्य सहायक कंपनियों की स्थापना की जैसेः (1) आईडीबीआई कैपिटल मार्केट सर्विसेज लिमिटेड (आईसीएमएस), पूंजी बाजार से संबंधित सेवाओं की एक श्रृंखला प्रदान करने के लिए, (2) आईडीबीआई इन्वेस्टमेंट मैनेजमेंट कंपनी लिमिटेड (आईआईएमसीओ), म्यूचुअल फंड का प्रबंधन करने के लिए और निवेशकों को अन्य निवेश उत्पादय (3) आईडीबीआई बैंक लिमिटेड, उच्च तकनीक वाली वाणिज्यिक बैंकिंग सेवाएं प्रदान करेगाय (4) उत्तर–पूर्वी विकास वित्त निगम लिमिटेड (एनईडीएफएल) उत्तर–पूर्व में पिछड़े क्षेत्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिएय (5) आईडीबीआई इंटेक लिमिटेड (आईआईएल), सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) से संबंधित गतिविधियों को शुरू करने के लिए और (6) नेशनल सिक्योरिटीज डिपॉजिटरी लिमिटेड (एनएसडीएल), आदि के साथ डिपॉजिटरी प्रतिभागी। वे संस्थागत बुनियादी ढांचे के स्वस्थ विकास को सुनिश्चित करने के लिए स्थापित किए गए हैं। आईडीबीआई और अधिक तेजी से औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के लिए।

7. भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (आईआरबीआई)– भारत 1965 के बाद से औद्योगिक रुग्णता बढ़ने और औद्योगिक क्षेत्रों में प्रतिकूल प्रभाव फैलाने से बहुत परेशान था। समस्या पुरानी और अप्रचलित मशीनरी, खराब प्रबंधन, कच्चे माल की कमी और बुनियादी सुविधाओं की कमी आदि जैसे कारकों के कारण हुई। ये कारक उद्योग की समाप्ति प्रक्रिया के लिए सहवर्ती हैं। इसलिए समस्या को खत्म करने के लिए, 1971 में भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम (IRCI) नामक एक नया निगम स्थापित किया गया था। इसका उद्देश्य बीमार और तालाबंदी वाली औद्योगिक इकाइयों के पुनर्वास और पुनर्निर्माण में सहायता प्रदान करना था। यदि आवश्यक हो, तो यह उद्योगों के आधुनिकीकरण, विस्तार और विविधीकरण के लिए प्रबंधकीय और तकनीकी सहायता भी प्रदान करेगा। डॉ. पी. डी. ओझा (1984) ने अपने अध्ययन में कहा है कि औद्योगिक रुग्णता की समस्या को कम करने के लिए देश में उद्योग की देखभाल के लिए 'पालना से गंभीर आधार' पर संस्थागत ढांचा विकसित किया गया था, जैसा कि वे ठीक ही बताते हैं, सरकार 1985 में भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (IRCI) की स्थापना की। इसने IRCI का अधिग्रहण किया। यह मूल रूप से बीमार औद्योगिक इकाइयों के पुनर्वास के प्रयासों में आईआरसीआई द्वारा सामना की जाने वाली अंतर्निहित कठिनाइयों को दूर करने के लिए था। IRCI का प्रमुख कार्य बीमार और बंद औद्योगिक इकाइयों को वित्त देना है। यह आईआरसीआई के समान था। हालाँकि, IRCI बीमार औद्योगिक इकाइयों को सावधि ऋण और अग्रिम, इक्विटी शेयरों, बॉन्ड और डिबेंचर की अंडरराइटिंग के माध्यम से सहायता करता है। यह ऋण और आस्थगित भुगतान की गारंटी भी देता है। यह उपकरण पट्टे पर देने, किराया–खरीद और उपकरण वित्त जैसी वित्तीय सेवाएं प्रदान करने और बुनियादी सुविधाओं, परामर्श, प्रबंधकीय और मर्चेंट बैंकिंग सेवाओं का प्रावधान करने के लिए एकाधिकार रखता है।

सुधार के बाद की अवधि में, हालांकि IRCI ने औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड IRCI की स्थापना की, बीमार औद्योगिक इकाइयों के पुनर्वास के वित्तपोषण का मुख्य कार्य अप्रासंगिक हो गया। इसकी अगली कड़ी के रूप में, IRCI को पर्याप्त परिचालन लचीलेपन और कार्यात्मक स्वायत्तता के साथ एक पूर्ण–उद्देश्यीय विकास वित्तीय संस्थान के रूप में पुनर्गठित किया गया था। तदनुसार, मार्च 1997 में IRCI को एक सरकारी कंपनी में बदल दिया गया और औद्योगिक निवेश बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेड IRCI के रूप में शामिल किया गया। IRCI की तरह, IRCI भी बीमार औद्योगिक इकाइयों को उत्पादों और सेवाओं के आधार पर वित्तीय सहायता प्रदान करता है। अंतर का एकमात्र उल्लेखनीय बिंदु था 1ः वित्तपोषण उद्योग की टोपी गतिविधियों ने अपना ध्यान बीमार इकाइयों को पुनर्जीवित करने से हटाकर तेजी से औद्योगिक विकास के लिए व्यवसाय–उन्मुख गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए स्थानांतरित कर दिया।

8. शिपिंग क्रेडिट एंड इंवेस्टमेंट कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड (एससीआईसीआई लिमिटेड)– भारतीय शिपिंग, मछली पकड़ने और संबंधित उद्योगों को ऋण और इक्विटी वित्त प्रदान करने के मद्देनजर शिपिंग क्रेडिट एंड इन्वेस्टमेंट कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड (एससीआईसीआई लिमिटेड) को 1986 में शामिल किया गया था। 1992–93 के दौरान, एससीआईसीआई ने विनिर्माण क्षेत्र में अपनी वित्तीय गतिविधियों में विविधता लाई थी। भारत में बुनियादी ढांचा और सेवा क्षेत्र। यह मुख्य रूप से आईसीआईसीआई द्वारा प्रचारित किया गया था और आईसीआईसीआई और अन्य दो वित्तीय

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

निगमों के साथ कंसोर्टियम में अपने उधार संचालन को समान संगठनात्मक वित्तीय संरचनाओं के साथ–साथ व्यावसायिक लोकाचार के साथ संचालित किया था। इस तरह की समानता के कारण, एससीआईसीआई को अंततः अप्रैल 1996 में आईसीआईसीआई के साथ विलय कर दिया गया था। विलय का उद्देश्य एक मजबूत पूंजी आधार होना और परिचालन दक्षता और उद्योगों की वित्तीय आवश्यकता को अनुकूलित करना था। 9.

9. भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी)– भारत सरकार द्वारा 1988 के बाद शुरू किए गए मैक्रो–इकोनॉमिक सुधारों का केंद्रीय मुद्दा लघु उद्योगों का संवर्धन और निरंतरता बनी रही। यह आईडीबीआई द्वारा भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) की स्थापना में की गई पहल से स्पष्ट था। सिडबी ने 2 अप्रैल 1990 को छोटे क्षेत्र में आईडीबीआई के संचालन को अपने हाथ में लेते हुए अपना परिचालन शुरू किया। इसे आईडीबीआई की पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी के रूप में स्थापित किया गया था। यह छोटे, छोटे और कुटीर क्षेत्रों में उद्योग के प्रचार, वित्तपोषण और विकास के लिए एक प्रमुख वित्तीय संस्थान है। इसके अलावा, यह समान गतिविधियों में लगे अन्य संस्थानों के कार्यों का समन्वय करने वाला है। सिडबी ने सहायता की विभिन्न योजनाएं शुरू की हैं जिनमें शामिल हैं: (ए) एसएफसी ६ एसआईडीसी ६ बैंकों और अन्य पात्र वित्तीय संस्थानों द्वारा दिए गए सावधि ऋणों का पुनर्वित्त। (बी) बिल की छूट और पुनर्भुनाई, यानी बिल फाइनेंस जो कि छोटे पैमाने के क्षेत्र में निर्माताओं द्वारा मशीनरीध्पूंजीगत उपकरणध्घटकों की बिक्री से उत्पन्न होगा। यह विशिष्ट समूहों को इक्विटी प्रकार का समर्थन भी प्रदान करता है जैसे। महिला उद्यमी, भूतपूर्व सैनिक और नए प्रमोटर। सिडबी ने 1992–93 के दौरान दो नई योजनाएं शुरू कीः (ए) उपकरण वित्त योजना, मौजूदा अच्छी तरह से संचालित एसएमए को प्रत्यक्ष वित्त प्रदान करने के लिए (आई स्केल इकाइयां जो प्रौद्योगिकी उन्नयन और आधुनिकीकरण जैसी परियोजनाओं के लिए योजनाबद्ध थीं और (बी) पुनर्वास में मदद करने के लिए पुनर्वित्त एनटीसी (नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन) इकाइयों के स्वेच्छा से सेवानिवृत्त कर्मचारी।

1. राज्य वित्तीय निगम (एसएफसी)– 1948 में जब IFCI की स्थापना की गई थी। इसका उद्देश्य बड़े पैमाने के उद्योगों के लिए संस्थागत वित्त में अंतर को पाटना और केवल इन उद्योगों को वित्तीय सहायता प्रदान करना था। इसने लघु और मध्यम आकार के उद्योगों की वित्तीय आवश्यकताओं की अवधि की समस्या पर विचार नहीं किया। इसके अलावा, एक एकल निगम से भारत जैसे विशाल देश में फैली विविध छोटी औद्योगिक इकाइयों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने की उम्मीद नहीं की जाएगी। इस स्थिति को दूर करने के लिए, सरकार ने भारत के विभिन्न राज्यों में अलग–अलग निगमों की स्थापना की।

राज्य स्तरीय वित्तीय निगमों (एसएफसी) को आईएफसीआई के समकक्ष के रूप में स्थापित किया गया था। यह राज्य वित्तीय निगम अधिनियम 1951 के अनुसार था। इसका उद्देश्य राज्यों में लघु और मध्यम उद्योगों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करना था। एस, के. बसु (1965) के अनुसार, ''एसएफसी छोटे और मध्यम आकार के उद्योग को औद्योगिक वित्त प्रदान करने के लिए संस्थागत व्यवस्था के आयोजन के राज्य क्षेत्र में पहला प्रयोग है।'' इसी तरह, एल.सी.गुप्ता (1969) ने अपने अध्ययन में कहा कि, एसएफसी को आईएफसीआई की तर्ज पर बारीकी से तैयार किया गया था, हालांकि, उनका उद्देश्य राज्य वित्तीय द्वारा निर्धारित सामान्य ढांचे के अनुसार छोटे और मध्यम आकार के उद्यमों की वित्तीय आवश्यकता को पूरा करना था। निगम अधिनियम, 1951 के तहत, विभिन्न राज्य सरकारों को औद्योगिक योजनाओं की प्राथमिकताओं के अनुरूप संबंधित क्षेत्रों में लघु और मध्यम उद्यमों को सावधि वित्त प्रदान करने के लिए विशेष राज्य स्तरीय संस्थान के रूप में एसएफसी की स्थापना करनी थी।

वर्तमान में, अठारह एसएफसी हैं जो भारत के विभिन्न राज्यों में कार्य करते हैं। वे सार्वजनिक या निजी कंपनियों, सहकारी समितियों, साझेदारी या स्वामित्व वाली संस्थाओं के रूप में संगठित लघु और मध्यम स्तर की औद्योगिक इकाइयों को दीर्घकालिक वित्त प्रदान करने के लिए स्थापित किए गए हैं। राज्य वित्तीय निगम उपरोक्त उद्योगों को सावधि ऋण और अग्रिम, इक्विटी, डिबेंचर, गारंटी ऋण, आस्थगित भुगतान के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए अधि.त हैं और इसके बाद से औद्योगिक प्रतिष्ठानों के स्टॉक, बांड या डिबेंचर जारी करने के लिए हामीदारी आरंभ की।

राज्य स्तरीय वित्त निगम 1970 से लघु और मध्यम उद्योगों को वित्तीय सहायता प्रदान कर रहे हैं। यह कई वित्तीय योजनाओं जैसे विनिमय के बिलों में छूट, बीज ६ विशेष पूंजी योजना और पुनर्वित्त की योजना और इक्विटी प्रकार की सहायता के माध्यम से किया जाता है। वे आईडीबीआई और सिडबी की ओर से ऐसी योजनाओं की पेशकश करते हैं। पुनर्वित्त और इक्विटी प्रकार की सहायता योजनाओं के तहत, एसएफसी छोटे सड़क परिवहन ऑपरेटरों, विशेष लक्षित समूहों में कारीगरों को सहायता प्रदान करता है जो अनुसूचित जाति ६ अनुसूचित जनजाति, महिलाओं, पूर्व–सेवा पुरुषों, शारीरिक रूप से विकलांग और आवश्यक तकनीकी विशेषज्ञता वाले उद्यमियों जैसे सामाजिक क्षेत्रों से आते हैं। एक उद्योग शुरू करने के लिए। बीजधविशेष पूंजी योजना के तहत, वे रुपये तक की इक्विटी प्रकार की सहायता प्रदान करते हैं। प्रमोटर के योगदान के सामान्य अपेक्षित स्तर और प्रमोटरों द्वारा लगाई जाने वाली वास्तविक राशि के बीच की खाई को पाटने के लिए छोटे

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

उद्यमियों को सॉट टर्म्स पर 4 लाख। 1989 से, SFC महिला उद्यमियों को भी इस योजना का विस्तार कर रहे हैं। इसके अलावा, पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगिक विकास में तेजी लाने के लिए, एसएफसी ने निर्दिष्ट पिछड़े क्षेत्र में स्थित औद्योगिक इकाइयों को रियायती वित्तीय सहायता की एक तरजीही योजना तैयार की है। इस योजना के तहत, वे उद्योगों को रियायती ब्याज दर, कम मार्जिन और कम सेवा शुल्क पर वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। यह ध्यान दिया जा सकता है कि आईडीबीआई ने हाल ही में एसएफसी को रियायती दर पर पिछड़े क्षेत्रों में उद्योगों को दिए गए ऋणों के मद्देनजर एक उदार पुनर्वित्त प्रदान किया है। यह औद्योगीकरण के संतुलित क्षेत्रीय वितरण को बढ़ावा देने में मदद करना है।

हाल के दिनों में, भारतीय उद्योग ने विविधीकरण में वृद्धि का अनुभव किया है। इसके साथ तालमेल बिठाने के लिए एसएफसी फूलों की खेती, टिशू कल्चर, पोल्ट्री फार्मिंग, वाणिज्यिक परिसरों और इंजीनियरिंग, तकनीकी, वित्तीय और विपणन आदि जैसी सेवाओं में लगी इकाइयों को सहायता प्रदान करते हैं। बदलते कारोबारी माहौल को देखते हुए, एसएफसी ने उपकरण पट्टे पर देने की पेशकश की है। सुविधाओं और इस प्रकार, तकनीकी परामर्श, मर्चेंट बैंकिंग, डिबेंचर ट्रस्टीशिप, निवेश गतिविधियों और पूंजी बाजार से संबंधित संचालन के क्षेत्र में प्रवेश किया। हालाँकि, ये सभी प्रकार की सहायता जो वे प्रदान करते हैं, IFCI, IDBI आदि के समान ही होती हैं। उपरोक्त वित्तीय गतिविधियों के अलावा, एसएफसी केंद्र और राज्य सरकारों और आईडीबीआई और आईएफसीआई जैसे सरकारी वित्त संगठन के एजेंट के रूप में भी कार्य कर सकते हैं। यह ऋण या अग्रिम या बांड या डिबेंचर की सदस्यता देने के संबंध में जा सकता है।

एसएफसी का एक महत्वपूर्ण पहलू है। छोटे और मध्यम स्तर के उद्योगों के लिए वे जो वित्तीय और प्रचार गतिविधियाँ करते हैं, वे निगम से निगम में भिन्न होती हैं, अंतर संबंधित राज्यों में औद्योगिक विकास के स्तर और उनकी जरूरतों और प्रशासन की दक्षता में चिह्नित होता है।

2. राज्य औद्योगिक विकास निगम (एसआईओसी)– एक और महत्वपूर्ण संस्थागत विकास, राज्य स्तरीय संस्थानों के एक नए समूह के रूप में हुआ, जिसे राज्य औद्योगिक विकास निगम, या राज्य औद्योगिक निवेश निगम (एसआईडीसी/एसआईआईसी) कहा जाता है। वे कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत साठ और सत्तर के दशक के दौरान स्थापित किए गए थे। वे संबंधित राज्यों में मध्यम और बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने और विकसित करने के लिए राज्य सरकार के उपक्रमों के पूर्ण स्वामित्व में थे। कार्यों को कुशलतापूर्वक करने के लिए एसआईडीसी को औद्योगिक उपक्रमों या परियोजनाओं या उद्यमों की योजना बनाने, तैयार करने और निष्पादित करने की शक्तियां प्रदान की गईं। इस संबंध में उन्हें राज्य में अपेक्षाकृत पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगीकरण की गति को तेज करने के लिए एक उपकरण के रूप में कार्य करना चाहिए था। वर्तमान में, भारत के विभिन्न राज्यों में अट्ठाईस एसआईडीसी/एसआईआईसी कार्यरत हैं। वे सावधि ऋण, हामीदारी और शेयरों और डिबेंचर के लिए प्रत्यक्ष सदस्यता, ऋण की गारंटी और अलग–अलग भुगतान के रूप में बड़े और मध्यम औद्योगिक प्रतिष्ठानों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए अधि.त हैं। उनके अलावा, एसआईडीसी इक्विटी भागीदारी और बीज पूंजी सहायता के माध्यम से उद्यमियों को जोखिम पूंजी प्रदान करते हैं। वे सहायता की अप्रत्यक्ष योजना के तहत आईडीबीआई से पुनर्वित्त और पुनर्भुनाई सुविधाओं के लिए भी पात्र हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, ए० एन०, भारत में जीवन बीमा (1988) साहित्य भवन प्रकाशक, आगरा
2. श्रीवास्तव, बालचंन्द, बीमा के तत्व, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, (1987)।
3. भारद्वाज, डी० सी०, बीमा के सिद्धासन्त, किताब घर पब्लिकेशन, इलाहाबाद (1987)।
4. बोस डी० एन०, शुक्ला जे० एस०, आस्थाना एल० के०, शुक्ला सोमेश, बीमाः सिद्धान्त एवं व्यवहार, एस० चन्द एण्ढ कम्पनी लिमिथ्टेड, नई दिल्ली।
5. पुरोहित डॉ० जे० के०, तातेड़, डॉ० बी० डी०, शाह, डॉ० पी० के०, बीमा, एस० चन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली।
6. सक्सेना, डॉ० एस० सी०, प्रबन्ध के सिद्धान्त, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, (1995)।
7. शर्मा, नरेश कुमार, जीवन बीमा के व्यवहार, ज्ञानपीठ पब्लिकेशन नई दिल्ली।
8. शर्मा, नरेश कुमार, जीवन बीमा के प्रयोग, ज्ञानपीठ पब्लिकेशन नई दिल्ली।
9. डॉ० शशीकान्त, जीवन बीमा के सिद्धान्त, नई दिल्ली।
10. डॉ० शशीकान्त, बीमा व्यवसाय परिवेश, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा (1992)।

*****